

आज की हिंदी कविता में दलित जीवन का यथार्थ

डॉ. साईनाथ तुकाराम उमाटे

हिन्दी विभाग प्रमुख, दयानंद वाणिज्य महाविद्यालय, लातूर

ई-मेल : umatesai85@gmail.com

आ

ज की हिंदी कविता निर्बलतम का पक्ष है। कहा जाता है जिसका कोई नहीं उसकी कविता है। जो सबसे कमजोर, दलित, पीड़ित और असहाय है उसका बल है। दलित चिन्तक डॉ. जयप्रकाश कर्दम का मानना है- “जीवन में जितने अभाव, कष्ट और दुःख हो सकते हैं दलित का जीवन उन सबसे परिपूर्ण रहा है। जितनी घृणा, अपमान, अन्याय और उपेक्षा उसने सही है वह भारतीय समाज की असभ्यता, अमानवीयता और वर्बरता का इतिहास बयान करती है। दलितों का दमन, शोषण और उनको दी गयी शारीरिक-मानसिक यंत्रणायें भारतीय समाज के माथे पर एक बड़ा कलंक है। कोई भी सभ्य समाज अपने इस प्रकार के व्यवहार पर कभी गर्व नहीं कर सकता, सिर्फ शर्मसार हो सकता है। किन्तु, अपवादों को छोड़ दिया जाए तो भारतीय समाज अपनी इस अमानवीयता और वर्बरता पर कभी शर्मसार नहीं हुआ। यदि हुआ होता तो उसने अपने व्यवहार में परिवर्तन किया होता। दुःखी-पीड़ित व्यक्ति के साथ सहानुभूति व्यक्त करना अलग बात है, उसको दुःखों से मुक्ति दिलाना दूसरी बात। हजारों साल से दलित का दुःख और दर्द बरकरार है और निरन्तर वह इससे जूझ रहा है। दलितों को समाज में मिलती आ रही यातना को, दंश को दलित कविता में न केवल अच्छी तरह महसूस किया गया है बल्कि उसका प्रबल प्रतिकार भी इसमें हुआ है। दलित साहित्य का संघर्ष जो कि दलितों की बेहतरी और मानवीय गरिमा के लिए है।”^१

प्रायः दलित कविता दलितों के शोषण-उत्पीड़न का आख्यान है। उसकी प्रत्येक कविता दर्द का दस्तावेज है। यह दर्द दलित कवियों को विभिन्न रूपों में मिला है और उसकी अभिव्यक्ति भी विभिन्न रूपों में हुई है। इसीलिए आज का

दलित कवि दीनता छोड़कर दमनकारी व्यवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त करता है। कर्दम लिखते हैं-

“विवशता से व्याकुल हो
वह अपने मन को मसोसता है
अपनी भूख और बेबसी को कोसता है और
ईर्ष्या, ग्लानि और क्षोभ से भरकर
व्यवस्था के जूते में
आक्रोश की कील ठोक देता है।”^२

इस तरह विषमतामूलक समाज-व्यवस्था के प्रति दलित कवि का मन गुस्से और आक्रोश से भरा है। इसलिए वे इस व्यवस्था का न्हास और विनाश देखना चाहते हैं। आज का दलित कवि इन सब को खुली आँखों से देख रहा है और यह महसूस कर रहा है कि इस दमन को सहने की बजाए इसका विरोध कर अपने जीवन को सार्थक बनना चाहिए। अतएव वे अपने प्रति होने वाले अन्याय और अमानवीय अत्याचार को चुपाचाप सहने के लिए तैयार नहीं - है क्योंकि वह उसके दुष्परिणामों को लम्बे समय से भोगते आ रहा है। लेकिन वह आज उसका प्रतिकार करते हुए कहता है-

“गुलामियों के खात्मे की
जिद किये हुए हैं हम
नहीं रुकेंगे अब हमारे
साथियों के ये कदम।
उठें कि रस्मे रूढ़ियों की,
बंदिशे हटा सकें।
उठें कि साफ स्वस्थ
नव समाज हम बना सकें।”^३

आज के कवियों ने अपनी कविताओं में केवल प्रेम, सौंदर्य तथा प्रकृति को ही महत्त्व नहीं दिया है, बल्कि उन्होंने समय के अनुरूप आम आदमी की स्थिति को भी परखने की कोशिश की है। आज की हिंदी कविता में स्त्री की संवेदना,

दलितों एवं आदिवासीयों पर किये गये अन्याय, अत्याचार तथा उनके जनजीवन को प्रखरता से अभिव्यक्त किया जा रहा है। कहना न होगा कि काल एवं समय के अनुरूप आज के काव्य लेखन के संदर्भ भी बदल रहे हैं। इसका कारण यह कि आज तक साहित्य केवल एक विशिष्ट वर्ग का ही प्रतिनिधित्व कर रहा था। इस विशिष्टता को तोड़ने का काम आज के कवियों ने किया है। आज हिंदी कविता में स्त्री, दलित तथा आदिवासी आदि के जनजीवन का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है।

आज की दलित कविता विद्रोह और प्रतिरोध के रास्ते पर चलकर जाति और वर्गविहीन समाज की परिकल्पना को मूर्त रूप देने की ओर अग्रसर हो चुकी है। दलित कविताओं की विशेषता है उनकी भाषा। विद्रोह की है और वह दलितों की अपनी जनभाषा है। कला और बिम्ब के स्तर भी दलित कविता ने नयी पहचान बनायी है।

आज की दलित कविता के मुक्ति संघर्ष ने कई नये ऊर्जावान कवि पैदा किये। इसमें प्रमुख कवि हैं- ओमप्रकाश वाल्मीकि, श्यौराज सिंह बेचैन, मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान, मलखान सिंह, कँवल भारती, सुशीला टाकभोरे, रजनी तिलक आदि। निश्चय ही इन कवियों की काव्य-चेतना जातिवाद से मुक्त है। इन कवियों को लगता है कि सम्पूर्ण शासक वर्ग ही शोषक वर्ग है और उसके विरुद्ध सीधी लड़ाई करने का आवाहन करता है। ये शासक वर्ग सिर्फ सत्ता में बैठा वर्ग ही नहीं है, वरन् यह वह वर्ग भी है जिसे सत्ता पालती है। इस शोषक वर्ग के खिलाफ दलित कवि अपनी सृजनात्मकता के माध्यम से लड़ाई लड़ता है। यह साझा लड़ाई राजनीति के क्षेत्र की नहीं है, बल्कि शब्दों के क्षेत्र की है। उन्होंने 'शब्द' को नया अर्थ दिया है। वह अर्थ है परिवर्तन का। मोहनदास नैमिशराय जैसा दलित कवि 'झाड़ू और कलम' कविता में दलितों में आये वैचारिक परिवर्तन को अभिव्यक्ति देते हैं। यथा-

“कल मेरे हाथ में झाड़ू था
आज कलम
कल झाड़ू से मैं तुम्हारी गंदगी हटाता था
आज कलम से।
तुमने गंदगी फैलाने के लिये
वेद, पुराण, मनुस्मृति का सहारा लिया
कल उन्हें जलाने का
मुझे अधिकार न था
आज शब्दों की आँच से

मैं उन्हें जलाऊँगा।”^४

दलित कवियों की कविता स्वानुभूति की कविता है, जिसमें अनुभूति की प्रामाणिकता मिलती है। जैसा कि जातीय अपमान ने दलितों को सबसे ज्यादा पीड़ित किया है। इसका सामना उन्हें अनेक बार करना पड़ा। सवणों की बस्तियों में आज भी किराये का मकान ढूँढते समय जाति के कारण अपमानित होना पड़ता है। अनेक कवियों का यह निजी अनुभव भी रहा है। किन्तु इस जातीय अपमान को दलित कविता में विग्नित करने का कार्य लगभग सभी दलित कवियों ने किया है। मलखान सिंह इसका जीवंत चित्रण करते हैं-

“इस अपरिचित बस्ती में
घूमते हुए मेरे पाँव थक गये हैं
अफसोस ! एक भी छत
सर ढकने को तैयार नहीं
हिन्दू दरवाजा खुलते ही
कौम पूछता है और
नाक भौ सिकोड़
गैर सा सलूक करता है।”^५

दलित काव्य में कितना स्पेस-घेरा है, उसकी गणना करना असंभव है। उसके केन्द्र में जाति है। लेकिन दलित कविता में यह तेवर हमें पहली बार देखने को मिलता है। जाति के नाम पर गैर सलूक से अपमानित कवि अगले दरवाजे पर दस्तक नहीं देता, बल्कि ठोकर मारता है और एक ऐसे घर के निर्माण की परिकल्पना करता है, जिसमें हर अपरिचित पाँव भी अपना लगेगा। मलखान सिंह कहते हैं-

“अब केवल यही सोच रहा हूँ कि
सामने बन्द दरवाजे पर
दस्तक नहीं, ठोकर दूँगा
दीवालें चूल से उखाड़
जमीं पर बिछा दूँगा
मकां ऐसा बनाऊँगा
जहाँ हर होंठ पर
बन्धुत्व का संगीत होगा
मेहनतकश हाथ में
सब तंत्र होगा
वृहद आँगन
हमारा घर बनेगा
हर अपरिचित पाँव भी
अपना लगेगा।”^६

मलखान सिंह ने 'रोटी' और 'सम्मान' की जो लड़ाई अपनी कविता में जो शुरू की थी, उसे आगे बढ़ाया। आज के

प्रतिष्ठित दलित कवि जयप्रकाश कर्दम ने। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के आन्दोलन से प्रभावित होकर अपने जीवन के अनुभवों को कविता में अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। जयप्रकाश कर्दम ने जीवन में गरीबी, भूख और अस्पृश्यता को महसूस किया है। इतना ही नहीं उसे झेला भी। उन्होंने ऐसे परिवेश को देखा, जिसमें सवर्णों के आतंक से दलित जातियाँ सदैव भयभीत रहती थीं। कहने को देश आजाद था और और कानून के नजर में सब समान थे किन्तु हकीकत में ऐसा नहीं था। अछूत जातियाँ आज़ाद भारत में डर-डर कर और जुबान बन्द रखकर जी रही थी। इसलिए कवि कहता है-

“अगर मैं बोल जाता
जंगल की आग की तरह
यह बात फैल जाति कि
ढेढ़ो का दिमाग चढ़ गया है,
मिसल गद्दी का एक चमार का लड़का
काजीपूरा के
एक जाट के छोरे से अड़ गया है।
तुरत-फुरत स्कूल के, सारे सवर्ण छात्र
गोलबन्द हो जाते,
कई दलित छात्रों के हाथ-पैर टूटते
और फिर
झगड़ा करने के
हम ही स्कूल से
'रेस्टीकेट' कर दिये जाते।” ७

आज की दलित कविता में स्त्री स्वर भी उभरकर आया है। दलित स्त्री कवयित्रियों ने अपने स्त्री-जीवन के अनुभवों का पूरी बेबाकी से साक्षात्कार कराया है। उनकी कविताओं की अनुभूतियों उनके अपने परिवेश से आयी हैं, जिसमें दलित स्त्रियों के सामाजिक यथार्थ को न केवल निकट से देखा है, बल्कि काफी हद तक उसे भोगा भी है। सुशीला टाकभौरे जैसी दलित कवयित्री स्त्री के बन्धनों को उन रीतियों में देखती है, जिन्हें उस पर लादा गया है। उन रीतियों को भस्म करनेवाली चिनगारियों को भी वह स्त्री के भीतर देखती है। सुशीला टाकभौरे ‘औरत नहीं है मजबूर’ कविता में कहती है-

“औरत नहीं है मजबूर
मजबूरियाँ हैं रीतियाँ
ढोते हुए अपना सलीब
अब यह थक गयी है।
अगर चाहते हो जानना
तो पूछकर तुम टोह ले लो
राख की हर ढेरी में

कितनी दवो चिनगारियाँ हैं।
तनिक इनको हवा दे दो
ईंधन स्वयं बन जायेंगी
बनकर ये शीला करेंगी
भस्म सब मजबूरियाँ।” ८

उपर्युक्त विवेचनों के आधार पर कहा जा सकता है कि आज दलित कविता अपने अधिकारों, हक एवं न्याय के प्रति प्रतिबद्ध है। प्रायः दलित कविता में दलितों एवं बहुजनों के जीवन के विभिन्न संदर्भों का महत्व रहा है। दलित कविता भोगे हुए यथार्थ, संघर्ष, विद्रोह की कविता है। आज के दलित कवियों ने दलित के शोषण को मिटाने के लिए संघर्ष एवं नये परिवर्तन को अपनी कविता में स्थान दिया। कहना न होगा सभी दलित कवियों ने समाज में स्थित वर्ण-व्यवस्था, वर्ग-भेद, जातीयता, शोषण, उत्पीड़न, तथा उच्च-नीच आदि का विरोध करके दलितों के जीवन के लिए संघर्ष करने की नयी चेतना उत्पन्न की है। इसका परिणाम यह हुआ कि आज सभी भारतीय भाषाओं के अन्तर्गत दलित साहित्य का सृजन अधिक किया जा रहा है।

संदर्भ सूची :

१. दलित विमर्श: साहित्य के आइने में-जयप्रकाश कर्दम, साहित्य संस्थान-गाजियाबाद, प्र.सं. २००९ पृ.-६५
२. गूंगा नहीं था मैं-जयप्रकाश कर्दम अतिश प्रकाशन, हरिनगर, दिल्ली-प्र.सं.१९९७ पृ.५४
३. कौन हूँ मैं- श्यौराज सिंह बचैन-सहयोग प्रकाशन, मयूर विहार, दिल्ली प्र.सं.१९९५ पृ. ३६
४. आग और आन्दोलन-मोहनदास जैमिशराय-भारतीय बौद्ध महासभा, बुद्ध विहार, आंबेडकर भवन, नयी दिल्ली प्र.सं. २०००, पृ. ५७
५. सुनो ब्राम्हण-मलखान सिंह-बोधिसत्त्व प्रकाशन, रामपुर (उ.प्र.) दूसरा सं. १९९७, पृ.२१
६. सुनो ब्राम्हण - मलखान सिंह-बोधिसत्त्व प्रकाशन, रामपुर (उ.प्र.) दूसरा सं.१९९७, पृ.२२
७. गूंगा नहीं था मैं-जयप्रकाश कर्दम अतिश प्रकाशन, हरिनगर, दिल्ली-प्र.सं.१९९७ पृ.३६-३७
८. तुमने उसे कब पहचाना- सुशीला टाकभौरे, शरद प्रकाशन, नागपुर, प्र. सं. १९९५ पृ.३७.